HINDI LITRATURE

बाल साहित्य की चुनौतियाँ

स्नेहलता निर्मलकर, हीरा सिंह लोधी

हिन्दी, डॉ. सी.व्ही. रमन विश्वविद्यालय, बिलासपुर, भारत

Published November 2026

Abstract

आज बाल साहित्य लिखने वाले और बाल साहित्य केपाठकों की रूचियों मेंतेजी से बदलाव आ रहा है। नये सिरे से साहित्य का सर्जन किये जाने की आवश्यकता और अवधारणाओं में नये नियमों का स्वागत किया जा रहा है । "पंचतंत्र से लेकर आज तक, समय चाहे कितना भी क्यों न बदला हो, हमने बाल साहित्य को एक 'थैरिपी' से ज्यादा कुछ नहीं माना। हम एक जमाने से बच्चों को उपदेशात्मक घुट्टी पिलाते जा रहे हैं। जबकि हम यह भूल जाते हैं कि बच्चे स्वयंकेअनुभवों से सीखना ज्यादा पसन्द करते है। इसी रूचि में आये बदलाव की वजह हमारा तेजी से बदलता समाज है जिसने बड़ों को ही नहीं बल्कि बच्चों केभी मनोवैज्ञानिक विकास को हिलाकर रख दिया है। मनोवैज्ञानिक लॉक का कथन हैकि "मनुष्य का मन एक स्वच्छ काले तख्ते केसमान है जिस पर बिना लिखे कोई संस्कार अंकित नहीं होता। जिस प्रकार काले तख्ते पर लिखे जाने केकारण कोई भी संस्कार अंकित नहीं हो पाता है, उसी प्रकार हमारे स्वच्छ मन पर वातावरण तथा जीवन अनुभवों के कारण अनेक संस्कार पड़ते हे।

Keywords: प्रमुख शब्द: छायावाद; यथार्थ; साहित्य; राष्ट्रीय चेतना; विविधता

1 प्रस्तावना

बच्चा जिस माहौल में पल एवं बढ़ रहा है निश्चित ही वह अपने आस-पास केपरिवेश से बहुत कुछ सीखता है, और यह सीखने की रूचि बच्चे की स्वयं की जिज्ञासापूर्ण प्रवृति पर भी निर्भर करती है। लेकिन यह सत्य नहीं है, हम हमेशा से मानते चले आ रहे है कि सभ्य और पढे ़लिखे परिवार केबच्चे सभ्यता और संस्कारों की ही बाते सीखते और करते है। वही किसी गरीब मैला ढ़ोने वाले या सड़क पर कूड़ा बीनने वाले केबच्चे असभ्य और गाली-गलौज में ही बात करते है उनमें संस्कारों का दूर-दूर तक कोई सरोकार नहीं होता है। बच्चे जिस महौल से निकल कर आते है उनका स्वभाव पर उसका असर तो निश्चित तारे पर दिखाई देता है यदि कुछ अपवादों को छोड़ दिया जाय तो ज्यादा तर पर यह बात ठीक ही प्रतीत होती है।लेकिन भारतीय समाज में कई धारणाएँप्रचलित है यहाँ कुछ मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि बच्चों केस्वभाव पर वंशानुक्रम का भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसी विषय पर निरंकार देव सेवक जी ने कहा है कि "केवल शारीरिक शक्तियाँ और दुर्बलताओं को यदि छोड़ दिया जाय तो मन और बुद्धि की सारी विशेषताएँमनुष्य में परिस्थितियों व वातावरण केप्रभाव से ही आती है।' बाल मनोविज्ञान का अध्ययन करने केलिए इसकी परिभाषा से परिचित हो लेते है । "बाल मनोविज्ञान, मनोविज्ञान की वह शाखा है जिसमें गर्भावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक केमनुष्य केमानसिक विकास का अध्ययन किया जाता है। जहाँ सामान्य मनोविज्ञान प्रौढ़ व्यक्तियों की मानसिक क्रियाओं का वर्णन करता है तथा उनको मनोवैज्ञानिक ढंग से समझने की चेष्टा करता है वहीं बाल मनोविज्ञान बालकों की मानसिक क्रियाओं का वर्णन करता और उन्हें समझने का प्रयत्न करता है।

2 बाल साहित्य की निर्मित के तत्व

भारतीय बाल साहित्य का इतिहास अत्यन्त प्राचीन और वैभवशाली रहा है।मौखिक बाल साहित्य की परम्पराओं से लेकर आज के दौर में बाल साहित्य के

निर्माण में कई ऐसे नये तत्व जुड़ गये हैं जिनकी कल्पना कर पाना भी सम्भव नहीं हैं। वैज्ञानिक युग केबढ़ते दबाव, तकनीक और गा्र फिक्स केप्रयोग ने बच्चों की कल्पनाशक्ति को एक अलग ही आयाम दिया है। बच्चों का जीवन कल्पना और रहस्यात्मक फैंटेसी की दुनिया को आत्मसात कर उसे मनोरंजन की नई ऊचाईयों और संभावनाओं को

देख रहा है । बच्चों में कल्पना शक्ति की परिभाषा जिसमें उन्हें मात्र कोरी कल्पना से अपने आप को दबाना नहीं है बल्कि वैज्ञानिक एवं तर्कसंगत दृष्टिकोण केद्वारा घटनाओं केपीछेछिपे सत्य तक पहुँचने की जिज्ञासा को जगाना है । घटनाओं केघटित होने केपीछेछिपे रहस्यों की खोज उनमें कल्पनाशीलता का विकास करता है । बाल उपन्यासकार बाल विज्ञान कथाओ को इस प्रकार लिखें कि वह उपदेश न बनकर रचनात्मक कल्पना लगे, जिसे बच्चे आसानी से स्वीकार कर लें। इसकेलिये जरुरी है कि लेखक अपनी रचनाओं में वैज्ञानिक नजरिये को शामिल करें और बच्चे साइंस और फिक्शन केअन्तर को समझ सकें। कविता या गीत हमारे जीवन का आधार हैं वह मृत शरीर में भी जान फूंक देते हैं वही बाल मन तो कोमल, सरल और जिज्ञासाओं से भरा रहता है। ऐसे में गीत संगीत केमाध्यम से अधिक सरल और बोधगम्य तरीकेसे बाल मन को अभिव्यक्ति प्रदान की जा सकती है। कविता जहाँ एक ओर गम्भीर भावों को कहने का माध्यम भी हैं वही दूसरी ओर इसमें। छिपी गेयता भी इसे बड़े स्वाभाविक ढंग से बाल मन की गहराईयों तक उतारती चली जाती है। मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि बाल कविता को सरल, सुबोध और बोधगम्य होना चाहिये, इसीलिये लोरियों के माध्यम से अबोध बालक कल्पना के आकाश में तैरने लगता है।

3 बाल साहित्य की चुनौतियाँ

हर विकसित होते समाज अलग-अलग विकसित होती चुनौतियों का सामना करते हुये आगे बढ़ता है। भारतीय बाल साहित्य अपनी परम्परागत लेखन शैली से अलग हटकर आधुनिक रचनात्मक लेखन कला और वर्तमान विकसित टेक्नोलाजी केसाथ सामंजस्य मिलाकर आगे बढ़ने केलिये कई चुनौतियों से जूझ रहा है। **लेखिका क्षमा शर्मा लिखती हैं** कि आज का बच्चा किस परेशानियों से गजुर रहा है क्या आज का लेखक उसे ध्यान में रखकर रचनाएँ लिख रहे हैं "क्या लेखक इस बच्चे को संबोधित कर रहे हैं। वह बच्चा और उसकेमाता-पिता आज की चुनौतियों को बच्चे की खूबी की तरह देख रहे है।एक तरफ उन कविता कहानियों से बचना है जो बच्चे को मार-मारकर उपदेश की घुट्टी पिलाते हों, तो दूसरी तरफ उस बच्चे को देखना है जिसकी हर इच्छा पूरी हो रही है मगर वह खुश नहीं है। बदलते सामाजिक सरोकारों ने बाल साहित्य को काफी प्रभावित किया है।बदलते सामाजिक सरोकारों ने बाल साहित्य को काफी प्रभावित किया है।

आज जीवन केहर क्षेत्र में टेक्नोलाजी का प्रयोग सीमा से अधिक बढ़ गया है उसका सही और उचित प्रयोग केदिशा-निर्देश क्या होने चाहिये इस पर चर्चा किये जाने की आवश्यकता है। बढ़ते बाजारवाद और लाभ कमाने की होड़ में बाल साहित्य और बच्चों केभविष्य को पीछेछोड़ दिया है। लाभ कमाने केलिये बच्चों को साधन या प्रोडक्ट केरूप में प्रयोग किया जाने लगा है। इन्ही भौतिकवादी मूल्यों और उपभोक्तावादी संस्कृति केबढ़ते प्रसार से मानव मूल्यों का ह्रास हो रहा है। बच्चों में संवेदनहीनता और हिंसक प्रवृत्तियों का देखा जाना अब बहुत आम सा हो गया है। बिना परिश्रम किये शार्टकट तरीकेसे सफलता प्राप्त करना बच्चों में अधिक प्रचलित है। आज परिवार की वैचारिक पृष्ठभूमि त्याग, बलिदान, सर्म्पण आदि भाव देखने को कम ही मिलते हैं। कठिन परिश्रम और मेहनत केबल पर सफलता प्राप्त करने का आत्मीय सुख बच्चों को अब नहीं मिल पा रहा है। ऐसे में साहित्य केमाध्यम से उन्हें सही दिशा देने का कार्य किया जा सकता है । जीवन में सफलता प्राप्त करने केलिये लम्बे ही सही लेकिन सही रास्ते को चुनने की प्रेरणा अच्छे संस्कारों द्वारा ही दी जा सकती है। यही संस्कार उन्हे अपने परिवारिक परिवेश और साहित्य से प्राप्त हो सकते हैं। ऐसे में परिवार की भूमिका अति महत्वपूर्ण हो जाती है। भारतीय परिवार पितृसत्तात्मक परिवार होते हैं और इसी सत्य को वह दूसरे पर थोपते चले जाते ह।ैं हमारे यहाँ बच्चों का स्वतन्त्र अस्तित्व स्वीकार नहीं किया जाता उन्हें शुरूआत से ही यही करना और सीखना होता है जो उन्हें उनकेबड़े सिखाते हैं। इसी प्रकार साहित्य भी बच्चों पर थोपा हुआ नहीं होना चाहिये। उन्हें उनकेमनोविज्ञान को ध्यान में रखकर और बालक केव्यक्तित्व को स्वतंत्र मानकर उनकेलिये रचनाएँ लिखनी चाहिये।

4 बाल साहित्य के बदलते सरोकार

हम यह मानते हैं कि साहित्य बच्चों केमनोवैज्ञानिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है वह बच्चों केमनोरजंन का साधन मात्र नहीं है बल्कि बदलतेसमाज में नैतिक जीवन मूल्यों की शिक्षा देने का एकमात्र साधन है वह बच्चों को आसपास केपरिवेश संस्कृति और सामाजिक व्यवहार केप्रति संचेतना जागृत करता है बच्चों की दुनिया बड़ों की

दुनिया से अलग होती है। उनकेअनुभव और उनकेसांचे ने का नजरिया हमसे काफी भिन्न होता gAS अतः बच्चों के लिये लेखन कार्य

करते समय सिर्फयह सोच कारगर नहीं है कि यदि साहित्य का सरल रूप बच्चों को दिया जाय तो वह बाल साहित्य की श्रेणी में आ जायेगा। बच्चों केलिये लिखते समय बाल सुलभ मनोवृत्ति को ध्यान में रखकर बाल साहित्य रचना लिखी जानी चाहिये। वास्तविकता तो यह है कि बच्चों केलिये रचनाकर्म करने में बड़े-बड़े साहित्यकार मात खा जाते हैं और इसीलिये वह बाल रचना करने में कतराते है, क्योकि वह जानते हैं कि यदि नन्हें पाठकों ने उनकी रचना को नकार दिया तो उनका साहित्य जगत का रहा सहा यश भी जाता रहेगा । बच्चों की साहित्यिक अभिरूचि का पता इस बात से ही लगता है कि यदि उन्हें अच्छा एवं रोचक साहित्य पढ़ने केलिये उपलब्ध कराया जाय तो उनकी लालसा इतनी अधिक तीव्र हो जाती है कि वह देशी विदेशी लेखकों एवं भाषा की सीमाओं को लांघकर सभी प्रकार की रचनाओं को पढ़ना चाहेंगे।

जिस तेजी से हमारा समाज विकसित हो रहा है, टेक्नोलाजी का विकास आज बड़े से लेकर बच्चों को हर स्तर से प्रभावित कर रहा है। इसी विकास में बाल साहित्य केविकास की गति धीमी पड़ती जा रही है। बाल साहित्यकार हरिकृष्ण देवसरे लिखते हैं "बीसवीं शताब्दी केउत्तरार्ध में सातवें दशक केआरम्भ से ही बाल साहित्य लेखन और प्रकाशन में जो गति आयी थी, वह शताब्दी केसमाप्त होते- होते धुंधली पड़ गयी। बाल साहित्य की जिस जरूरत को लेखकों ,प्रकाशकों, शिक्षकों, अभिभावकों और मनोविज्ञानियों ने बड़ी गम्भीरता से समझा था, वह आज लुप्त होती जा रही है।" आज इस 21वीं सदी में भी बाल साहित्य अपनी तलाश कर रहा है, उस पर व्यापारवादिता, भ्रष्टाचार के अलावा कम्प्यूटर और काटूर्न कार्यक्रमों की विचारधारा होती है । आज भी बाल साहित्य परम्परावादी लेखन शैली और आधुनिकता बोध केद्वन्द्व केबीच झूल रहा है। साहित्य तत्कालीन समाज और संस्कृति एवं लोगो की मानसिक चेतना और उनकी साहित्यिक जरूरतो को ध्यान में रखकर लिखा जाना चाहिए।

5 मानवता और मुनाफे का अन्तर्द्वन्द्व

भविष्य की चिन्ता आज बच्चे, युवाओं से लेकर उनकेअभिभावकों तक सभी को रहती है । वर्तमान समय में बडती प्रतिस्पर्धा में बच्चों केपास समय ही नहीं है कि वह साहित्य की ओर ध्यान दे सकें। अध्ययन पूरा हो जाने केबाद भी उन्हें अपने लिए समय निकाल पाना मुश्किल पड़ता है। आने वाले दिन से लेकर आने वाले भविष्य तक केलिये उन्हें निरन्तर संघर्ष करना पड़ता है । बढ़ती बेरोजगारी और प्रतिस्पर्धा केकारण अच्छे-अच्छे प्रतिभावान युवक-युवतियों के हौंसले पस्त हो जाते हैं । भारत में आरक्षण की नीति जहाँ कुछ मायनों में सही प्रतीत होती है वही कुछ प्रतिभावन युवाओं केलिये घातक भी सिद्ध हुई है। ऐसे में बच्चों और विशेषकर युवाओं में मध्य पारम्परिक साहित्य पढ़ने केलिये समय का अभाव रहता है। एवं उनकी रूचि भी नहीं रहती कि वह पाठ्यक्रम या कम्पटीशन की किताबों से अलग कुछ पढे।़ प्रतिस्पर्धा के युग में आज का बच्चा कोर्स की किताबों से अलग भी काम्पटीशन की ही किताबें पढ़ता है।

आज केइस प्रतिस्पर्धात्मक युग में साहित्य में भी प्रतिस्पर्धा दिखाई देती है। रचनाकर्मी मुनाफेकेलिये अपनी लेखनी चला रहे हैं उन्हें बच्चों केभविष्य और साहित्य की दिशा से कोई सरोकार नहीं रहा है। आज चारों ओर मानवता पर मुनाफेका वर्चस्व कायम है, अर्थात केवल मुनाफा कमाने केलिये लोग संवेदनहीनता की सीमा पार कर गैर जरूरी साहित्य और पुनरवर्ती कर लेखनी की बाढ़ सी लगा दी है। रचना कार्य में दिखने वाली संवेदनहीनता बच्चों केमस्तिष्क में गहरी छाप छोड़ पाने में असमर्थ हैं। वही संवेदनशील रचनाकारों को कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है। बाल साहित्यकार मस्तराम कपूर कहते हैं "संभवतःनये युग केसन्दर्भ में साहित्य वह चीज है जिसे साहित्यकार कहे जाने वाले किसी व्यक्ति ने लिखा है और साहित्यकार वह व्यक्ति है जिसने अपने आपको साहित्यकार घोषित किया अथवा कराया है।"

नगरीकरण और उदारीकरण ने जीवन की नई राहें और दिशा में परिवर्तन कर दिया है । आज हमारी इस भाग-दाडै़ भरी जिन्दगी में हम अपने लिये समय को पकड़ने की जद्दोजहद में लगे रहते है इसी केसाथ कदम मिलाते हुये आज बचपन भी पहले जैसे नहीं रहा। आज बच्चों का जीवन भी उतना ही व्यस्त और गतिशील है जितना बड़ों का। स्कूल और पढ़ाई केबोझ केसाथ-साथ बच्चों को बहुत कुछ सीखना और करना होता है। स्कूलों की दशा और व्यवस्था पर विचार करे तो हम पाते हैं कि बच्चे तो स्कूल से तनाव लेकर घर आते है। हर रोज स्कूल आकर पास की स्टेशनरी

दुकानो में माँ-बाप केसाथ जाना उनकेलिये अनिवार्य सा हो गया है । कल जो-जो चीजें उन्हें मडैम ने लाने को कही है उनमें से कुछ वहाँ नहीं मिली तो दुकान-दुकान, बाजार-बाजार भटकने केसिवा उनकेपास कोई चारा नहीं रहता है। यदि माता-पिता दोनों कामकाजी हो तो समस्या और भी बढ़ जाती है। ऐसे में सामगी्र ढूँढे प्रोजेक्ट बनाने में माता-पिता और बच्चों को कितनी कठिनाई हो सकती है, इसका अनुमान लगाना कोई कठिन काम नहीं है। इसी प्रकार बच्चे स्पर्धा में आकर बड़े - बड़े प्रोजेक्ट दुकानों से बनवाकर अपने स्कूलो में दे आते हैं। ऐसे में वह उससे क्या सीखेगें और क्या प्राप्त करेगें इस पर किसी ने विचार करने की नही सोची। बड़े स्कूल सिर्फदिखाने केलिये अपनी पैरेन्टस् टीचर मीटिंग में सुन्दर-सुन्दर प्रोजेक्ट प्रदर्शनी केलिये लगा देते हैं, बिना यह सोचे कि यह बच्चों की खुद की मेहनत नहीं है। ऐसी गतिविधियाँ बच्चों का विकास करने की बजाय उन्हें कुंठित करने का काम करती हैं। ऐसी ही अनेकों व्यर्थ गतिविधियों में बच्चों का समय बर्बाद होता है और स्वयं के लिये उनके पास समय ही नहीं बचता है।

6 सत्य की जीत से जीत के सत्य की ओर

हमारा राष्ट्रीय चिन्ह अशोक चक्र जिसमें लिखा है कि सत्यमेव जयते अर्थात सच्चाई की हमेशा जीत होती हैं बच्चों में शुरूआत से ही इन प्रतीकों और उनकेपीछेछिपे इनकेमूल्यों केबारे में सीखना शुरू कर देते हैं। इसकेद्वारा वह सीखता है कि समाज का एक जिम्मेदार सदस्य कैसे बने। स्कूलो में एवं कालेजों में कराई जाने वाली विभिन्न गतिविधियों द्वारा वह सीखता है कि देश केप्रति अपने विश्वास का प्रतिनिधित्व कैसे किया जाय। यह उसमें देश भक्ति की भावना पैदा करने केसाथ एक समुदाय से सम्बन्धित होने की भावना पैदा करता है। 'सत्यमेव जयते' सिर्फ राजनैतिक एवं ऐतिहासिक घटनायें मात्र नहीं हैं बल्कि एक विचार, एक भावना और उन लोगो का प्रतिनिधित्व करती हैं जिन्होनें उस पर विश्वास किया है। बच्चो में सच्चाई की बुराई पर जीत का पाठ हमारी संस्कृति में हमारे परिवारिक परिवेश और संस्कारों में एवं हमारी पाठ्यपुस्तकों की मूल अवधारणा में शुरूआत से ही आत्मसात कराया जाता है। प्राचीन लोककथाओं, मौखिक कथा-कहानियों की कथावस्तु इसी आधार पर टिकी हुई है । भारत में जहाँ लोककथाओं का इतिहास बहुत पुराना और समृद्व है वहीं इसकी किस्सागोई और कल्पनाशीलता इसे अधिक प्रचलित एवं बच्चों की पसन्दीदा कथाओं केसंकलनों में शामिल रहती है। इन लोककथाओं की भाषा और क्षेत्रीयता की विविधता इसे समृद्ध बनाती हैं। भारत की लगभग सभी क्षेत्रीय भाषाओं में ऐसी अनेकों मौलिक लोककथाओं सुनने और सुनाने की प्रक्रिया चली आ रही है । इन लोककथाओं की प्रमुख विशेषता इसमें दिये जाने वाले नैतिक संस्कार एवं शिक्षा हैं।

7 वर्चस्व की संस्कृति

अभिभावकों द्वारा यह मान लिया जाता है कि बच्चे सदैव उन्हीं की इच्छा अनुसार कार्य करेगें वर्चस्व की प्रथम श्रेणी का शोषण कहलायेगा। बच्चों का हमारे देश की संस्कृति में स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है , उन्हें एक लम्बे समय अन्तराल तक अपने माता-पिता और अभिभावकों की छाया में रहना पडत़ा है। यही से बच्चों को आदर्श और संस्कारों की शिक्षा देने केप्रयोजन से अभिभावक बच्चों का अपना वर्चस्व था वे अपने उपदेश सिखाने लगते हैं ताकि वह उनका आज्ञाकारी बालाक बनकर रहें। जहाँ पर (जिन घरो मे)ं बच्चों को इतनी स्वतन्त्रता मिलती है कि बच्चे माँ-बाप की बात को इन्कार करे उनका विरोध करे उन घरो में अभिभावक कुदृष्टि का शिकार होते हैं कि उन्होनें अपने बच्चों को अच्छे संस्कार नहीं दिये, उनका अपने बच्चों पर बिल्कुल काबू नहीं है। उनके बच्चों के भविष्य का तो भगवान ही

मालिक है और उनकेबच्चे तो हाथ से निकल चुकेहै । इसी तरह केउपमानों से विभूषित कर माता-पिता को कोसा जाता है। इसी सामाजिक दबाव केकारण बच्चों को नसैगिर्कमानसिक एवं शारीरिक क्षमता से भिन्न, जब अभिभावक बच्चों पर दबाव डालते हैं वह भी मानसिक हिंसा का ही प्रतिरूप है। अपने अभिमान और स्टेट्स केलिये अपने बच्चों को उनकी रूचि से भिन्न कार्यो में झोंकने से न केवल उनकी नसैगिर्कप्रतिभा केविकास में बाधा पडत़ी है बल्कि यह हिंसा का प्रकार है। जो आगे चलकर बच्चों केमानसिक विकास पर विपरीत असर डालता है और मानसिक हिंसा से शारीरिक हिंसा का शिकार होता है।

8 उपसंहार

इस निष्कर्ष की तरफ आगे बढ़ते हुये हम इस जगह आ चुकेहैं जहाँ बाल साहित्य परम्परा एवं आधुनिकता बोध के सभी सरोकार साफ-साफ दिखाई देने लगे हैं। जहाँ यह मानव विकास का क्रम दर्शाती हैं वहीं आंचलिकता का प्रभाव भी इनमें देखने को मिलता है। मौखिक परम्परा केअंतर्गत कहानी कहने-सुनने की कला में निरन्तर सुधार केसाथ बच्चों द्वारा इसका रागात्मक सम्बन्ध बन जाता gAS बच्चों केस्वाभाविक मनोभावों द्वारा अपनी कल्पना शक्ति का विस्तार कर सुन्दर मौखिक गीतों का निर्माण कर लेते हैं। आज भी मौखिक रुप में कविता कहानियों को सुनाये जाने की आवश्यकता पर बल दिया जाना चाहिये। अपने मत की पुष्टि केलिये निरंकार देव सेवक, डॉ. श्री प्रसाद, मस्तराम कपूर आदि केमतों को प्रमाण स्वरुप प्रस्तुत किया है। बच्चों की मानसिकता में तेजी से आ रहे आधुनिक परिवर्तनो एवं बदलती वैज्ञानिक विचारधाराओं पर विचार किया है । टी.वी. मोबाइल केबढ़ते प्रयोग और उनमें दिखाई जाने वाली हिंसा केदुष्परिणामों से अपने बच्चों को सुरक्षित रखना एवं उनमें सही-गलत की समझ और सकारात्मक नजरिये के विकास पर केन्द्रित है। विचारकों केमतों द्वारा यह सिद्ध करने का प्रयास है कि आधुनिकता बोध को ग्रहण करने एवं समय के प्रवाह के साथ बच्चों में अत्यन्त सकारात्मक ऊर्जा का सही तरीके से प्रयोग करने की आवश्यकता है।

9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

आजकल पत्रिका, क्षमा शर्मा, नवम्बर 2012, पृष्ठ 20

बाल साहित्य के सरोकार, हरिकृष्ण देवसरे, यस पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2012, पृष्ठ 8

बाल साहित्य के सरोकार, हरिकृष्ण देवसरे, यस पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2012, पृष्ठ 9

हिन्दी बाल साहित्य कुछ पड़ाव, दिविक रमेश, प्रकाशन विभाग, दिल्ली, 2015, पृष्ठ 5

बाल साहित्य के सरोकार, हरिकृष्ण देवसरे, यस पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2012, पृष्ठ 9

बाल साहित्य के सरोकार, हरिकृष्ण देवसरे, यस पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2012, पृष्ठ 164

बाल साहित्य के सरोकार, हरिकृष्ण देवसरे, यस पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2012, पृष्ठ 118

बाल साहित्य के सरोकार, हरिकृष्ण देवसरे, यस पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2012, पृष्ठ 21

हिन्दी बाल साहित्य का विवेचनात्मक अध्ययन, मस्तराम कपूर, अनामिका पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स प्रा. लि., प्रथम 2015, पृष्ठ 52